न्यायामूर्ति जवाहर लाल गुप्ता और वी. एस. अग्रवाल के समक्ष

भगत राम और अन्य, -याचिकाकर्ता

बनाम

भारत संघ और अन्य, -उत्तरदाता

सी. डब्ल्यू. पी. सं. 17654 सन *1998*

8 दिसंबर, 1998

बैंकों और वित्तीय संस्थानों को देय ऋणों की वसूली। अधिनियम,1993-धारा 21-धारा का दायरा-क्या प्रावधान मनमाना और असंवैधानिक है- अभिनिर्धारित, नहीं।

अभिनिर्धारित किया गया कि धारा 21 में निहित प्रावधान के अवलोकन से पता चलता है कि एक व्यक्ति जो न्यायाधिकरण द्वारा पारित आदेश को चुनौती देता है, उसे अपनी अपील डालने करने से पहले देय ऋण राशि का 75 प्रतिशत जमा करना पड़ता है। यह प्रावधान हितकारी है। इसकी गणना सार्वजनिक बकाया की शीघ्र वसूली को बढ़ावा देने के लिए की जाती है। यह जनहित की सेवा करता है। यह मनमाना नहीं है। यह अनुचित नहीं है। इसमें पर्याप्त सुरक्षा उपाय हैं। यह न्यायाधिकरण पर कारणों को दर्ज करने का दायित्व बनाता है।

(पैरा 7 &8)

एन. डी. अचिंत, *अधिवक्ता- याचिकाकर्ता के लिए*

निर्णय

जवाहर लाल गुप्ता,न्यायमूर्ति (मौखिक)

(1) क्या बैंकों और वित्तीय संस्थानों को देय ऋणों की वसूली अधिनियम, 1993 की धारा 21 मनमानी और असंवैधानिक हैं? यह संक्षिप्त प्रश्न है जो इस रिट याचिका में उठता है। कुछ तथ्यों पर ध्यान दिया जा सकता है।

(2) याचिकाकर्ताओं ने यूनाइटेड कमर्शियल बैंक से ऋण लिया था। 25 अक्टूबर, 1985 को बैंक ने याचिकाकर्ताओं और प्रतिवादी संख्या 5 से 8 के खिलाफ 11,97,144.20 रुपये की वसूली के लिए मुकदमा दायर किया। 2 जुलाई, 1998 को, ऋण वसूली न्यायाधिकरण, जयपुर ने मुकदमे का फैसला सुनाया और कहा कि बैंक 11,51,763 रुपये की वसूली का हकदार है। ब्याज और लागत के दावे को भी पुष्ट किया गया। याचिकाकर्ताओं ने कहा कि प्रतिवादी संख्या 5 से 8 के साथ मिलकर, उन्होंने अपीलीय न्यायाधिकरण के *समक्ष* एक अपील को प्राथमिकता दी। 15 सितंबर, 1998 के आदेश के अनुसार, उन्हें 4 लाख रूपये न्यायालय में भरने के आदेश दिए गए, जो 2 किश्तों में भरे जाने का आदेश हुआ। यह दो किश्ते 1 नवंबर,1998 एवं 1 दिसंबर, 1998 तक या उससे पहले भरने के लिए आदेश हुए। यह आदेश अधिनियम की धारा 21 के तहत पारित किया गया था। आदेश की एक प्रति रिट याचिका के साथ अनुलग्नक पी-1 के रूप में प्रस्तुत की गई है। इस आदेश से व्यथित याचिकाकर्ताओं ने वर्तमान रिट याचिका दायर की है।

(3) याचिका को सुनवाई के लिए 18 नवंबर, 1998 को सूचीबद्ध किया गया था। हमने टी एंड ई याचिका को "बाद में बताए जाने वाले कारणों" के लिए खारिज कर दिया था। अब हम अपने कारण बता रहे हैं।

(4) याचिकाकर्ताओं के वकील श्री अचिंत ने तर्क दिया कि दिल्ली उच्च न्यायालय बार एसोसिएशन और एक अन्य बनाम भारत संघ[1] में दिल्ली उच्च न्यायालय की एक खंड पीठ द्वारा अधिनियम के *प्रावधानों को पहले ही असंवैधानिक घोषित कर दिया गया है। इस* आधार पर यह तर्क दिया गया कि धारा 21 के प्रावधान असंवैधानिक हैं। इस प्रकार, 4 लाख रुपये के भुगतान का निर्देश देने वाला आदेश रद्द किए जाने के योग्य हैं। क्या ऐसा ही है?

(5) यह अधिनियम "बैंकों और वित्तीय संस्थानों को देय ऋणों के शीघ्र निर्णय और वसूली" के लिए न्यायाधिकरणों की स्थापना का प्रावधान करने के लिए लागू किया गया था। अधिनियम की संवैधानिक वैधता के मुद्दे पर इस न्यायालय की एक खंड पीठ ने सी. डब्ल्यू. पी. संख्या 12901 और 1996 की *13340 (मैसर्स कुंदन राइस* मिल्स *बनाम भारत संघ और मैसर्स चमन राइस मिल्स* बनाम *भारत संघ) में* विचार किया था। पीठ ने दिल्ली उच्च न्यायालय के फैसले पर भी विचार किया। दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा लिए गए दृष्टिकोण का पालन नहीं किया गया। इस अधिनियम को समाज की जरूरतों को पूरा करने के लिए "अनुकूलित" माना गया

[1] 1995 Delhi Law Times 815

था। इसकी वैधता की चुनौती को नकार दिया गया था। रिट याचिकाओं को सीमित रूप *से खारिज* कर दिया गया था। अतः दिल्ली उच्च न्यायालय के निर्णय पर आधारित तर्क को कायम नहीं रखा जा सकता है।

(6) धारा 21 में निहित प्रावधान पर विशेष रूप से ध्यान दिया जाना चाहिए। यह निम्नानुसार प्रदान करती है कि—

> 'अपील दायर करने पर देय ऋण राशि का जमा- जहां किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा अपील की जाती है जिससे ऋण की राशि किसी बैंक या वित्तीय संस्थान या बैंकों या वित्तीय संस्थानों के संघ को देय है, ऐसी अपील पर अपीलीय न्यायाधिकरण द्वारा तब तक विचार नहीं किया जाएगा जब तक कि ऐसा व्यक्ति अपीलीय न्यायाधिकरण में धारा 19 के तहत न्यायाधिकरण द्वारा निर्धारित ऋण राशि का पचहत्तर (75%) प्रतिशत जमा नहीं कर देता हैः
>
> बशर्ते कि अपीलीय न्यायाधिकरण, लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों से, इस धारा के तहत जमा की जाने वाली राशि को माफ या कम कर सकता है।"

(7) उपरोक्त प्रावधान के अवलोकन से पता चलता है कि एक व्यक्ति जो न्यायाधिकरण द्वारा पारित आदेश को चुनौती देता है, उसे अपनी अपील पर विचार करने से पहले बकाया ऋण राशि का 75 प्रतिशत जमा करना पड़ता है। इसके अलावा, अपीलीय न्यायाधिकरण, लिखित रूप में कारणों को दर्ज करके, जमा की जाने वाली राशि को माफ या कम कर सकता है। जमा को माफ करने की शक्ति में निहितार्थ से जमा के लिए समय बढ़ाने की शक्ति शामिल होगी।

(8) यह प्रावधान हितकारी है। इसकी गणना सार्वजनिक बकाया की शीघ्र वसूली को बढ़ावा देने के लिए की जाती है। यह प्रावधान जनहित की सेवा करता है। यह मनमाना नहीं है। यह अनुचित नहीं है। इसमें पर्याप्त सुरक्षा उपाय हैं। यह न्यायाधिकरण पर कारणों को दर्ज करने का दायित्व बनाता है। यह उन प्रावधानों के समान है जो बिक्री कर अधिनियम और आयकर अधिनियम जैसे विभिन्न कर कानूनों में मौजूद हैं। प्रावधान में कुछ भी मनमाना नहीं है।

(9) मामले के तथ्य इस तरह के प्रावधान की आवश्यकता का उदाहरण हैं। याचिकाकर्ताओं ने उस तारीख का खुलासा नहीं किया है जिस दिन उन्होंने ऋण लिया था। इसके अलावा, जयपुर में न्यायाधिकरण द्वारा पारित आदेश की एक प्रति भी पेश नहीं की गई है। तथ्यों पर एक अध्ययन मौन प्रतीत होता है। इसके अलावा, यह भी प्रतीत होता है कि बैंक ने 25 अक्टूबर, 1985 को याचिकाकर्ताओं के खिलाफ मुकदमा दायर किया

था। न्यायाधिकरण द्वारा 2 जुलाई, 1998 को आदेश पारित किया गया था। याचिकाकर्ता 13 वर्षों तक कार्यवाही में देरी करने में सफल रहे हैं। इस बीच, याचिकाकर्ताओं की बकाया राशि कई गुना बढ़ गई है। इसके बावजूद, अपीलीय न्यायाधिकरण ने उन्हें केवल 4 लाख रुपये जमा करवाने के लिए समय दिया था। याचिकाकर्ता इतनी राशि जमा करने के लिए भी तैयार नहीं हुए।

(10) हम याचिकाकर्ताओं के पक्ष में कोई समानता नहीं पाते हैं। प्रावधान की संवैधानिक वैधता के संबंध में विवाद में कोई योग्यता नहीं है। यह इन लिमिने खारिज के लिए एक उपयुक्त मामला है। तदनुसार हम *ऐसा करते* हैं।

एस. सी. के.

22138 एच. सी.सरकार। प्रेस, यू. टी., चंडीगढ़

अस्वीकरण: स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय, वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके, और किसी अन्य उद्देश्य के लिया इसका उपयोग नहीं किया जा सकेगा। सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा।

रवि अमितोज़
प्रशिक्षु न्यायिक
अधिकारी